मानवाधिकार एवं भारतीय संस्कृति

*श्री किशन मीना
** धर्मपाल सिंह

शोध सारांशः

भारतीय संस्कृति में अधिकार की संकल्पना न होकर कर्म की रही है, इसके साथ ही समाज में न्याय एवं दण्ड की एकरूपता भी विद्यमान थी। इसके अन्तर्गत समय का कोई वर्ग द्वारा शास्त्र विहित कर्त्तव्य के विरूद्ध आचरण करने पर दण्ड के विधान की प्रक्रिया भी निर्धारित थी। सदियों तक विदेशी शासन के साये में रहते हुए भी भारतीय संस्कृति मानव मूल्यों व मानवाधिकार की पोषक थी तथा स्वयं को बचाए रखने में कुछ सीमा तक सक्षम रही। भारतीय संस्कृति के ह्रास का बड़ा कारण मुस्लिम आक्रामकों के सैनिकों द्वारा महिलाओं व लड़कियों के जबरन उठाकर ले जाने, धर्म परिवर्तन कर विवाह करने तथा बड़ी संख्या में सैनिक भर्ती के लिए लोगों का धर्म परिवर्तन करता रहा। मुस्लिम सम्राट द्वारा विजित क्षेत्रों में निरीह जनता के मुस्लिम धर्म प्रणाली अपनाने व धार्मिक स्थलों के विध्वंस की पीड़ा उस जनसमुदाय को करनी पड़ी जो सत्ता व सेना के समक्ष पूरी तरह असहाय थे। ऐसी विरूद्ध स्थिति में लोगों के जीवन के अधिकार, धार्मिक स्वतंत्रता जैसे महत्वपूर्ण अधिकार, मुस्लिम सेना की इच्छा पर निर्भर थे। ये स्थितियां इसलिए उत्पन्न हुई कि छोटे–छोटे राज्य परस्पर युद्ध व घृणा से ग्रसित थे जिन्हें जनता की चिन्ता न होकर अपने अहंकार को बनाए रखने की चिन्ता थी। मानवाधिकार एक सुदृढ़ एवं संरक्षित देश का शासन ही प्रदान कर सकता है और यही स्थिति आज भी बहुत से देशों के साथ घटनाक्रम का भाग बनी हुई है।

प्रस्तावना :

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में धर्म की अवधारणा में ही व्यापक मानवीय सामाजिक व्यवस्था के रूप में मानवाधिकारों पर विचार किया गया था। प्राचीन भारत को धर्म का धार्मिक व नैतिक विधान था तथा राज्य का व्यवहार ही दण्ड विधान को नियंत्रित करता था। शासन भी सामान्य नागरिक की भांति कानून के प्रति उत्तरदायी होता था तथा विधि के समक्ष समानता द्वारा राज्य व्यवस्था संचालित किया जाता था। राज्य के लिए आवश्यक जनसंख्या, निश्चित भूखण्ड, सुदृढ़ शासन व्यवस्था व सार्वभौम सरकार जो बाहरी नियंत्रणों से पूरी तरह मुक्त हो। इसके स्थान पर कौटिल्य ने अपनी रचना अर्थशास्त्र में राज्य के सात आवश्यक अंग माने जो स्वामी, आमात्य, जनपद, दुर्ग, कोष, दण्ड व मित्र है।

राजा परम्पराओं व प्रथाओं का सम्मान करता था तथा वेद, वेदान्त आदि में राज्य व जनता कानून की दृष्टि से समान माने गए हैं। जैन आचार मीमांसा के अनुसार सम्यक् दृष्टि, सम्यक संकल्प, सम्यक वाणी, सम्यक कर्मान्त, सम्यक आजीव, सम्यक व्यायाम, सम्यक स्मृति व सम्यक समाधि सदगुण विकास के माध्यम है। यह मीमांसा स्पष्ट करती है कि सद्गुण, व्यक्ति समाज और विश्व की मंगल कामना के सूत्र है। श्रीमद्भागवत गीता मानव के लिए अपने कर्त्तव्यों के पालन का संदेश देती है। जैन धर्म के चौबीसवें तीर्थकर महावीर स्वामी के व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर सर्वाधिक बल दिया। सम्राट अशोक का दर्शन दया, मानवता, करूणा प्रेम व अन्य मानवीय सिद्धान्तों पर आधारित

था।

प्राचीन भारतीय समाज वर्ण व्यवस्था पर आधारित था जिसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र वर्ग कर्मों के आधार पर बनाये गए थे। इस व्यवस्था का चिन्तन कर्म व्यवस्था के आधार पर मान्य था क्योंकि यही चार प्रमुख कर्म समाज के लोगों के क्षेत्र थे। कालान्तर में वर्ण व्यवस्था वर्ग आधारित न होकर जन्म आधारित होने से इस व्यवस्था की आलोचना की जाने लगी जिससे ब्राह्मणवाद की गलत सोच तक कहा गया। संभवतः यही एक स्थिति मानी जा सकती है जब मानवाधिकारों का उल्लंघन आरंभ हो गया था। इसका कारण सर्वत्र सफाई एक इच्छित या कार्यक्षमता के अनुसार करना और एक उस कर्म को मजबूरी में करने के लिए बाध्य होना ही उन स्थितियों को सृजित करता है जहां मानवाधिकार का हनन कहा जा सकता है।

इस स्थिति के परिणामस्वरूप समाज शोषक व शोषित के वृहद् वर्गों में विभक्त हो गया। ऐसी स्थिति में महात्मा बुद्ध ने धार्मिक टकराव व असंतोष की स्थिति को दूर करने के लिए बौद्ध धर्म को मानव धर्म के रूप में प्रतिपादित किया। मध्यकालीन भारत में भी मानवाधिकार की उपस्थिति किसी न किसी स्वरूप में बनी रही। मुगलकालीन भारत में अकबर व जहांगीर की न्यायप्रियता प्रसिद्ध रही है। अकबर के धार्मिक नीति और 'दीन इलाही' के माध्यम से जनता को धार्मिक सहिष्णुता की प्रेरणा थी। इसी अवधि में भक्ति आन्दोलन का उद्देश्य लोगों में धार्मिक भेदभाव मिटाकर प्रेम व सहयोग की भावना बनाए रखना था।

आधुनिक भारत में पुरानी सामाजिक बुराईयों को दूर करने के लिए राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, ज्योतिबा फुले, नारायण गुरू व महात्मा गांधी जैसे समाज सुधारकों ने मानव गरिमा बनाए रखने के लिए सख्त संघर्ष किया। विश्व के सुधारवादी आन्दोलनों से प्रभावित होकर भारतीय नेताओं ने 1928 में नेहरू रिपोर्ट तथा कराची प्रस्ताव द्वारा कांग्रेस अधिवेशन में मानवाधिकारों के लिए आवाज उठायी। भारत के संविधान में अंकित मौलिक अधिकार, नीति निर्देशक तत्व तथा संविधान की प्रस्तावना में वर्णित सामाजिक न्याय की स्थापना तथा बियालीसवें संविधान संशोधन द्वारा जोड़े गए मौलिक कर्त्तव्य इस दिशा में सकारात्मक प्रयास थे।

भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन के अन्तर्गत शोषण के विरूद्ध संघर्ष किया गया जो मानवाधिकार व मानवता के लिए किया गया प्रयास था। स्वतंत्रता आंदोलन द्वारा राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ सामाजिक व आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करना भी मानव समाज के विकास लिए सुव्यवस्थित प्रयास था। कई सदियों से आजाद देश के समक्ष सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक राजनीतिक वातावरण निर्माण करना सबसे आवश्यक कार्य था। संविधान लागू होने व उसमें वर्णित मौलिक अधिकारों के बारे में देश की बहुसंख्यक जनता को जानकारी मिलने और विभिन्न प्रकार की सुविधाएं एवं आरक्षण प्राप्त करने की दिशा में होड़ लगने लगी। यह स्थिति आज भी यथावत जारी है जबकि अशिक्षित जनता को भी इन सभी अधिकारों व सुविधाओं की जानकारी नहीं थी।

पश्चिमी देश प्रायः मानवाधिकार के प्रणेता होने का दावा करते हैं परन्तु मानवाधिकार हनन में सर्वाधिक नृशंस भूमिका इन्हीं देशों की रही है। सर्वप्रथम बमों का निर्माण पश्चिमी देशों द्वारा ही किया गया तथा नए अस्त्र शस्त्र विकसित कर विजय अभियान के लिए कम विकसित देशों में साम्राज्य स्थापित किया गया। उद्योगों में मशीनीकरण करके मानव को बेरोजगार बनाया गया तथा बड़े उद्योग लगाकर सामान्य कुटीर व पारिवारिक उद्योग में हजारों लगे लोगों की जीविका समाप्त कर दी। इसका एकमात्र उद्देश्य भारत से कच्चा माल खरीदकर इंग्लैण्ड की मिलों में निर्माण कर उपनिवेशों में बेचकर भरपूर लाभ कमाया जावे। भारत में व्यापार कम्पनी के रूप में आए व्यक्तियों के समूह ने अपना साम्राज्य स्थापित कर ब्रिटिश साम्राज्य के अधीन कर दिया।

वर्ष 1857 के स्वतंत्रता आन्दोलन की पृष्ठभूमि यह थी कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने कमजोर होते मुगल साम्राज्य के

अधीन राजे रजवाड़ों से संधि करके धन वसूलना आरम्भ कर दिया। समझौते में ऐसी शर्तें रखी गई कि संबंधित राज्य ब्रिटिश सरकार की अधीनता स्वीकार करता है। इस संधि को माध्यम बनाकर अंग्रेजों ने अपनी सेना राज्य में रखी जिसका खर्च राजा से वसूलने लगे। राज्यों में अंग्रेज रैजीडैन्ट या एजेन्ट लगाकर उनसे आन्तरिक व यहां तक कि पारिवारिक मामलों में भी दखल देने लगे। 1857 में झांसी की रानी को युद्ध करने के लिए मजबूर होना पड़ा, क्योंकि रानी के पति के निधन पर बालक को राज्याधिकार सौंपने के अंग्रेजों ने अस्वीकार कर अपने अधीन लेने के आदेश जारी कर दिए।

झांसी की रानी की मदद के लिए कई राजा भी सेना लेकर आगे बढ़े लेकिन अंग्रेजों ने किले के रक्षकों को रिश्वत देकर द्वार खुलवाकर सेना सहित भीतर प्रवेश किया। झांसी की रानी के किले की प्राचीर से घोड़े सहित छलांग लगाकर युद्ध के लिए बढ़ना पड़ा जिससे सेना व्यवस्थित न रह सकने से हार गई। इससे राजस्थान की कई छावनियो में भी भारतीय सैनिकों ने विद्रोह कर दिया, जिन पर विजय पाने के लिए राजाओं को बाध्य किया गया। अंग्रेज किसानों से कच्चा माल पहले सोना या चांदी बेचकर खरीदते थे उस पर नियंत्रण स्थापित कर किसानों पर लगान में सारा अनाज तक ले जाते और किसान मजबूर होकर उनके कृत्यों को देखता रहा।

सैनिक विद्रोह समाप्त होने पर ब्रिटिश शासन पूरे देश में स्थापित हो गया तथा राजे–रजवाड़े सन्धियों के माध्यम से अंग्रेज शासन के अधीन रहे। अंग्रेज अफसर भारतीयों को भद्दी नस्लीय गालियां देते तथा किसी छोटी सी बात पर गंभीर यातनाएं देते। किसी भी व्यक्ति को शक के आधार पर जेल में डाल दिया जाता तथा उसकी सुनवाई की प्रक्रिया जारी रहती। ब्रिटिशकाल में ठिकानों पर उच्च श्रेणी में रेल यात्रा करने वाले भारतीय को अंग्रेज के आने पर उतार दिया जाता, जिसकी सुनवाई कहीं नहीं होती थी। सभी उत्तरदायी पदों पर अंग्रेजों की ही नियुक्ति की जाती थी। पहले व दूसरे विश्वयुद्ध में भारत के राजे–रजवाड़ों में धन व सेना उपलब्ध कराई और कुछ राजा स्वयं युद्ध लड़ने गए परन्तु अंग्रेज इन बातों का कोई अहसान न मानकर उन्हें गंदी गालियां देकर मजाक उड़ाते।

भारतीय संस्कृति और सभ्यता में मानवीय अधिकारों की अवधारणा भारत में वैदिककाल से ही पुष्पित वं पल्लवित होती रही है। भारत को वसुधैव कुटुम्बकम, विश्व बन्धुत्व, शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व और सम्भूय समुत्थान जैसे उदात्त आदर्शो का सन्देश देकर भारतीय अधिकारों एवं सम्मान को प्रतिष्ठापित करने में सदैव सफल रहा। भारतीय संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में मानवाधिकार मानव की अस्मिता का कवच व ढाल, विश्व शान्ति व विश्व कल्याण के मूल मंत्र है। मानवाधिकारों के मानवता रूपी वृक्ष का खाद व पानी माना गया, जिससे वृक्ष का पोषण होता रहा।

मानव अधिकारों को स्वयं जगत नियन्ता ईश्वर ने सूर्यदेव की प्रखर किरणों को लेकर मानव प्रकृति में इस स्वरूप में पिरोया जिसे कोई मानवीय शक्ति नष्ट नहीं कर सकी। मानव जगत के उद्भव एवं विकास की कहानी का सारभूत तत्व मानवाधिकारों के प्रसार का सन्देश है। यह पावन अधिकार व कर्त्तव्य है, जिसे कौटिल्य ने कार्य की संज्ञा से अभिहित किया। धर्म, राष्ट्र और वंश तीनों समाज के संघटक तत्व हैं, जिन्हें सहस्रबुद्धि ने भी स्वीकार किया, जिन्होंने कार्य की प्रतिष्ठा की अनिवार्य मानते हुए भूमिनिष्ठा व राष्ट्रनिष्ठा का विकास माना है। वे हिन्दू समाज के लिए धर्मक्रान्ति की आवश्यकता को स्वीकार करते हैं परन्तु धर्म के नाम पर कर्मकाण्ड के ढकोसले को स्वीकार नहीं करते।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में दासता का स्वरूप पाश्चात्य देशों से बिल्कुल भिन्न था। ऐरियल ने मेगस्थनीज कृत इण्डिका के आधार पर लिखा है कि ''सब भारतीय स्वतंत्र हैं तथा उनमें से एक भी दास नहीं है। भारतीय विदेशियों को भी दास नहीं बताते, इसलिए अपने देशवासियों को दास बताने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता।'' मेगस्थनीज के दास भाव के नहीं पकड़ पाने का कारण यह रहा होगा कि प्राचीन भारत में दासों के साथ किए जाने वाला व्यवहार मानवीय था,

जिसकी प्रकृति स्वामी और भक्त जैसी रही होगी, जो उनके मानवाधिकारों का सजीव उदाहरण है। मानव के समग्र विकास में मानवाधिकारों की भूमिका महत्वपूर्ण है तथा इनकी अनुपस्थिति में मानव के विकास की संकल्पना भी नहीं की जा सकती।

मानवाधिकारों का विकास पूरब व पश्चिम पृष्ठभूमि में पृथक–पृथक धरातल पर हुआ तथा उनके संदर्भ भी एक–दूसरे से बिलकुल भिन्न रहे। मानवाधिकार का पाश्चात्य स्वरूप अधिकार प्रधान है, जबकि भारतीय संस्कृति में यह सदैव कर्त्तव्य प्रधान रहा। इनमें सामंजस्य की स्थिति उत्पत्ति का माध्यम रहा तथा सम्पूर्ण संसार में मानवाधिकार की उत्पत्ति धार्मिक शिक्षा से हुई है। धर्म व दर्शन भारतीय संस्कृति के प्राण वायु हैं इसलिए उनकी प्रकृति भी धर्म व दर्शन के साथ जुड़ी हुई है। पश्चिम में चर्च को पादरियो में दीर्घकाल तक राजनीतिक व सामाजिक वातावरण पर अपना वर्चस्व बनाए रखा। हिन्दू, बौद्ध व जैन धर्म का विकास कर्त्तव्य प्रधान मानवाधिकारों के स्वरूप में हुआ।

गांधीजी की अभिव्यक्ति के अनुसार उन्होंने अपनी अशिक्षित किन्तु बुद्धिमान माता से सीखा कि उचित कर्त्तव्य निभाने के पश्चात् ही यथोचित अधिकार प्राप्त होते हैं। मानव को जीने का अधिकार इसलिए प्राप्त है कि वो सभी मानवों के जीने के कर्त्तव्य का निर्वाह करता है। डॉ. नगेन्द्रसिंह ने अपनी पुस्तक इन्टरनेशनल लॉ में लिखा है कि ''मानव अधिकार के चार दृष्टिकोण होते हैं, जिनमें राष्ट्रीय दृष्टिकोण की उत्पत्ति राष्ट्रीय दायरे में ही होती है, जबकि अर्न्तराष्ट्रीय दृष्टिकोण महान व गंभीर है। इनमें मानवीय अधिकारों को पृथक नहीं किया जा सकता है और न ही राष्ट्रीय सीमाओं में सीमित किया जा सकता है। तीसरा दृष्टिकोण यह दर्शाता है कि मानवाधिकार शान्तिकाल में ही प्राप्त होते हैं। चौथा दृष्टिकोण युद्धकालीन मानवाधिकारों से है जिनकी जानकारी प्रायः बाद में ही पता लगती है।

मानव विकास के अधिकार के बिना मानवाधिकार अधूरे रहते हैं तथा जो विधिशास्त्री मानव विकास की अनदेखी करते हैं, उनका चिन्तन सतही व खोखला होता है। समाज का आधार साझी नैतिकता से होता है जो एक सम्पूर्ण विचार नहीं है। जहां जो वर्ग समाज में प्रबल होता है वहां की नैतिकता उस वर्ग के हितों और श्रेष्ठता की भावना उस सामाजिक वर्ग के अनुरूप उपजती है। इन स्थितियों में मानवाधिकार मानव जाति के वर्ग विशेष के अधिकार हैं, जो प्रबल वर्ग में ही समाहित होती है। इन कारणों से नैतिकता व मानवाधिकार की पृथक–पृथक अवधारणाएं है। मानवाधिकार प्रकृति में निहित अधिकार है, जिनके अभाव में मनुष्य की आध्यात्मिक व अन्य सामाजिक आवश्यकताएं पूरी नहीं हो सकती है।

मानवाधिकार का आधार मानव की उस आकांक्षा में निहित है, जो ऐसे जीवन की चाह रखती है जहां मानव को सुरक्षा व प्रतिष्ठा प्राप्त हो। मानवाधिकारों के कभी–कभी मूलभूत अधिकारों अथवा प्राकृतिक अधिकारों के स्वरूप में भी अभिनिर्धारित किया जाता है। मूलभूत अधिकार संविधान में प्रदत्त होते हैं, जिनका आधार विधिसम्मत है, जबकि प्राकृतिक अधिकार ऐसे कानून या सांस्कृतिक रीति–रिवाजों के हैं जो पूरे देश पर लागू होते हैं। भारतीय संस्कृति में सार्वभौमिकता व समानता की बौद्धिक अवधारणाएं निहित है जो भारत की परम्परागत धरोहर व विरासत का प्रतिरूप है। भारतीय परम्परा विश्वास, सम्मान व सामाजिक संरचना में सर्वव्याप्त है जिसकी प्रकृति कर्त्तव्य पर आधारित है।

मानवाधिकार भारतीय मनीषियों के अन्तःकरण में सदैव विद्यमान रहे हैं जिन्हें भारतीय चिन्तकों ने अनवरत चिन्तन करके भारतीय संस्कृति को सहिष्णुता, अहिंसा, मैत्रीभाव, समानता मानव सम्मान, मानवीय गरिमा एवं स्वतंत्रता से ओत–प्रोत रखा है। वैदिककालीन विचारों के अनुसार सत्य एक है जिसका विद्धान पृथक–पृथक स्वरूप में वर्णन करते हैं एवं श्रेष्ठ व सकारात्मक विचार प्रत्येक दिशा से आते हैं। ऋग्वेद भ्रातृत्व के अनुसार मनुष्य की समानता, प्रतिष्ठा, भ्रातृत्व व सभी की सुख–शान्ति में निहित है। जैन व बौद्ध धर्म के सिद्वान्तों में अहिंसा, प्रेम, करूणा सभी के प्रति मैत्री भाव निहित है। महात्मा बुद्ध के सिद्वान्त मानवाधिकारों की मूल चेतना को अभिव्यक्त करते हैं कि किसी

जीव की हत्या न करें, अपने दासों पर अत्याचार नहीं करे, सदाचार किसी बलिदान से अधिक अर्थपूर्ण है, इसमें अधिक ऐश्वर्य में नहीं रहे कि बन्धुत्व भाव ही समाप्त हो जावे, शरीर के उपवास के स्थान पर भावनाओं को नियंत्रित रखें।

भौतिक विज्ञान के अनुसार प्रत्येक क्रिया प्रतिक्रिया को जन्म देती है। इसी प्रकार शोषक व निरंकुश शासन विद्रोह व क्रान्ति को जन्म देता है। संम्राट अशोक ने युद्ध विरोधी दृष्टिकोण अपनाकर मानवता को नई दिशा प्रदान की। यह भावना एक सक्षम राष्ट्र की भावना ही हो सकती है, जो थोपे जाने पर युद्ध अवश्य करे परन्तु उसे टालने का भरसक प्रयास करे। जैन धर्म की चेतना अधिक संवेदनशील है जिसमें मानव के साथ अन्य जीवों को जीवन का अधिकार स्वीकार किया गया है। चार्वाक ऋषि के अनुसार मानव के शरीर, मुख व अन्य अंग एक समान हैं, इसलिए वर्ण व जाति का भेद करना अस्वाभाविक है।

प्राचीन भारत की अहिंसा, सहिष्णुता, सहअस्तित्व व सम्मान की भावनाएं मध्यकाल में भी जारी रही परन्तु यहां इस्लामिक संस्कृति का भी प्रभाव पडा, जिसके अनुसार मानव प्रकृति से सम्पूर्ण प्राणी है और मानवाधिकार उसका विशिष्ट गुण है। पैगम्बर साहब के अनुसार कभी किसी से विश्वासघात या द्रोह नहीं करे। किसी बच्चे या स्त्री की हत्या न करे। यह खुदा व पैगम्बर के मध्य दिशानिर्देश स्वरूप समझौता है। इस्लाम मनुष्य को उसके सम्पूर्ण सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और आध्यात्मिक स्वरूप में देखता है। सम्पन्न लोगों को कम भाग्यशाली लोगों के प्रति न्याय व उपासना का भाव रखना चाहिए। अकबर ने धर्म के आधार पर भेदभाव न करके हिन्दुओं को तीर्थकर की छूट प्रदान की।

अकबर ने सदियों से प्रचलित दासता पर अंकुश लगाया और सभी लोगों को अपना धर्मपालन की स्वतंत्रता प्रदान की। मध्ययुगीन भक्ति परम्परा मे सभी हिन्दू–मुस्लिम कवियों ने धार्मिक गीत सिखाए जो आज तक प्रचलित हैं। दक्षिण भारत में संत अलंकार संत व उत्तर भारत में ख्वाजा मोइनुदीन चिश्ती पूरे समाज में धर्मगुरू के रूप में स्वीकार थे। महाराष्ट्र के तुकाराम व नामदेव, बंगाल के चण्डीदास, जयदेव व विद्यापति के मानवतावादी कविताएं लिखी। रामानन्द के शिष्य कबीर ने जाति व्यवस्था को सशक्त चुनौती दी। साथ ही कर्मकाण्ड व अंधविश्वास पर भी तीखा प्रहार किया। गुरूनानक भी हिन्दू मुस्लिम एकता के रूप में जनता में विख्यात हुए।

आधुनिक विचारकों ने मानवतावाद को नई दिशा प्रदान की जिसमें बड़ा योगदान अंग्रेज साम्राज्य का रहा जिन्होनें सविनय अवज्ञा आन्दोलन, अहिंसक आंदोलन व स्वतंत्रता की मांग करने पर बर्बर अत्याचार किए। इसके अतिरिक्त प्रसिद्ध विचारक आइंस्टीन ने मत व्यक्त किया था कि दुनिया में रहने के लिए सबसे खतरनाक स्थान है, इसलिए नहीं कि यहां पापी लोग अधिक संख्या में निवास करते हैं परन्तु इसलिए कि इन पापियों का कोई विरोध नहीं करता। आतंकवाद के नाम पर निरीह लोगों की हत्या कर देश को अस्थिर करने की कार्यवाही के लिए नई प्रणालियां विकसित करनी आवश्यक हो गई है जिससे ऐसे तत्वों की कार्यवाही पर नियंत्रण लगाया जा सके। भारत के लिए आतंकवाद फैलाने के लिए पाकिस्तानी सेना की आतंकवादियों को हरसंभव सहायता प्रदान कर रही है।

बालविवाह, सतीप्रथा, दलितों के प्रति अत्याचार, लडकियों के साथ सामूहिक बलात्कार जैसी घटनाएं वर्तमान समाज के नृशंस उदाहरण हैं जिनके लिए कड़े कानून बनाने के पश्चात् भी इन समस्याओं को पूरी तरह समाप्त नहीं किया जा सका है। इसके साथ–साथ जातीय पंचायतों के विभिन्न फैसले मानवाधिकार के लिए घातक सिद्ध हो रहे हैं। जहां संबंधित राज्य सरकार इन पंचायतों की गतिविधि रोक पाने में विभिन्न कारणो से असमंजस की स्थिति में पड़ी है और पीड़ित व्यक्ति व परिवार न्यायालय में मुकदमे करने तक से घबराते हैं, उनका गांव में रहना मुश्किल कर दिया जाता है। ये जातीय पंचायतें बलात्कार जैसी घटनाओं के कर्ताओं को चेतावनी देकर छोड़ देती है।

इस स्थिति में मानवाधिकार की बातें केवल कानून पास करने तक ही सीमित नहीं होकर पीड़ित लोगों को संबंध प्रदान करने के लिए समाज, प्रचार माध्यम, स्वयंसेवी संगठन सार्थक भूमिका का निर्वाह कर सकते हैं। ऐसे मामलो में मुख्य समस्या पीड़ित परिवार द्वारा पुलिस में रिपोर्ट व न्यायिक प्रक्रिया के दौरान पूरे परिवार की सुरक्षा और सभी प्रभावित व्यक्तियों पर जब तक कठोर कार्यवाही नहीं की जाती, तब तक मानवाधिकार केवल साज–सज्जा का ही अलंकरण बन सकते हैं। मानवीय गरिमा जब तक सबसे दलित व पिछड़े तबका का अस्त्र नहीं बनती, केवल अलंकरण युक्त मानव अधिकार कारगर होना संभव नहीं है।

***शोधार्थी**
राजनीति विज्ञान विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)
****सह–आचार्य**
राजनीति विज्ञान विभाग
पं. नवल किशोर शर्मा राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
दौसा (राज.)

संदर्भ –

1. पाण्डेय अजय कुमार (2009), भारतीय संस्कृति एवं मानवाधिकार, डा. पी0के0 पाण्डेय का संकलन, पृ0 1–3
2. भारत सरकार (2010) इण्डिया, 2010, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृ0 26–27.
3. भारत सरकार (2010) इण्डिया 2010, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृ0 27.
4. भारत सरकार (2005) सूचना का अधिकार अधिनियम 2005
5. जान बॉन बाण्ड रेट – कान्केस्ट ऑफ वायलैन्स, पृ0 189
6. जोशी आर.पी. (सं.) 2003, मानव अधिकार एवं कर्तव्य, पृ0 61–71.
7. नेर्मा जी.पी. एवं शर्मा के. के. (2009) मानवाधिकार, सिद्वान्त एवं व्यवहार, पृ0 33–39
8. सिंह कविता (2009) बी.के. पाण्डेय की सम्पादित भारतीय संस्कृति एवं मानवाधिकार, पृ0 15–20.
9. श्रीवास्तव कुलदीप कुमार (2009), बी.के. पाण्डेय की सम्पादित भारतीय संस्कृति एवं मानवाधिकार, पृ0 34–36.
10. पाठक महेन्द्र (2009) बी.के. पाण्डेय की सम्पादित भारतीय संस्कृति एवं मानवाधिकार, पृ0 42– 47